इकाई 3 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ (भाग 1)

इकाई की संरचना

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ (भाग 1)

3.3 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों का परिचय

3.4 सारांश

3.5 शब्दावली

3.6 अभ्यास प्रश्नों की उत्तरमाला

3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.0 उद्देश्य

वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ भाग एक नामक इस इकाई के अध्ययन के अनन्तर आप बता सकेंगे कि :

- वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ किनको कहते हैं ?
- वास्तुशास्त्र के प्रचार प्रसार की व्यापकता क्या है ?
- वास्तुशास्त्र का क्रमिक विकास किस प्रकार हुआ ?
- वास्तुशास्त्र का मूल प्रतिपाद्य विषय क्या है ?
- वास्तुशास्त्र के मूल में निहित तत्व और विषय क्या हैं ?
- मानक ग्रंथो की उपयोगिता और महत्ता को समझेंगे।
- वास्तुशास्त्र को और नजदीक से जानने की जिज्ञासा बढ़ेगी।

3.1 प्रस्तावना

भारतीय जीवन दर्शन में मानव जीवन आनन्द तथा शान्ति की प्राप्ति के लिए है। त्रिकालद्रष्टा मुनियों ने जीवन को इहलौकिक और पारलौकिक दो भागो में बांटकर मानव जीवन काल में भौतिक तथा आध्यात्मिक सुख शान्ति के लिए ऋक्, यजु, साम और अथर्व संज्ञक चार वेद बताये हैं। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष छः वेदांग हैं। पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र चार उपांग हैं। उपपुराणों का पुराणों में, वैशेषिक शास्त्र का न्याय में, इतिहास संज्ञक महाभारत और रामायण का सांख्य, पातंजल, पाशुपत और आगमों का अभ्युदय निःश्रेयशपद धर्मशास्त्रों में अन्तर्भाव युक्त है। इस प्रकार चतुर्विध वेद, षडंग, पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र ही चौदह विद्यास्थान हैं।

पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रांगमिश्रिता: ।
वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश: ।।

परमपिता परमात्मा की अनादि और दिव्य वाणी ही वेद है ऋग्वेद इस सम्पूर्ण सृष्टि की सम उपलब्ध प्राचीनतम ज्ञान राशि है वेद से ही सभी प्रकार के ज्ञान और विज्ञान का उद्गम हुआ है इस सृष्टि के आरंभ से लेकर अध्यापक जितना भी ज्ञानी अभिज्ञान हमें इस सम्पूर्ण संसार के किसी भी भूभाग पर दिखाई देता है उस ज्ञान या विज्ञान के बीज सूक्ष्म रूप से वेदों में प्राप्त होते हैं । ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद संज्ञक चार वेद हैं । इन चार वेदों के अपने-अपने उपवेद हैं । ऋग्वेद का उपवेद आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद, सामवेद का गन्धर्ववेद एवं अथर्ववेद का उपवेद स्थापत्य वेद है ।

स्थापत्य वेद ही वास्तुशास्त्र का उद्गम स्थल है यद्यपि चारों ही वेदों में वास्तुशास्त्र से सम्बन्धित उल्लेख प्राप्त होते हैं, तथापि इसका मूल उद्गम स्थापत्य वेद को ही माना जाता है। क्योंकि स्थापत्य वेदक का साक्षात अथर्ववेद का ही उपवेद है अर्थात वास्तुशास्त्र का मूल सम्बन्ध अथर्ववेद से है इस प्रकार वेद का वास्तुशास्त्र से सीधा सीधा सम्बन्ध है वास्तुशास्त्र का मूल उद्गम स्थल होने के कारण वास्तुशास्त्र के स्वरूप निर्धारण में वेद की प्रमुख भूमिका है वैदिक काल में उद्धृत इस शास्त्र का उत्तर वैदिक काल और पौराणिक काल में पल्लवन हुआ और आज यह स्वतन्त्र शास्त्र के रूप में प्रतिष्ठित है ।

वेद न केवल आध्यात्मिक ज्ञान के स्रोत है बल्कि अनेक प्रकार की भौतिक विद्याओं का भी मूल उद्गम स्थल हैं । वेद के ऋषियों ने अपने अंतर्दृष्टि के माध्यम से इस सृष्टि के विविध राशियों का ज्ञान प्राप्त किया तथा वेद के मन्त्रों के माध्यम से उसे ज्ञान का उपदेश अपने शिष्यों को किया । इसी वैदिक ज्ञान के प्रकाश से सम्पूर्ण विश्व प्रकाशित हुआ और वैदिक ज्ञान की जन्मभूमि भारत को विश्वगुरु होने का गौरव प्राप्त हुआ । विश्व के विभिन्न भागों से अनेकों विद्वान भारत आए तथा भारत की इस ज्ञानसंपदा को जानकर उन्होंने मुक्त कंठ से भारत के विश्वगुरुत्व को स्वीकार भी किया है । वैदिक पृष्ठभूमि पर समस्त विज्ञान में सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण का चिंतन किया ही किया है, उसके साथ-साथ वेदो ने प्रकृति के संरक्षण को भी प्रमुखता दी गई है । मानव के सुख समृद्धि और ऐश्वर्य हेतु प्रकृति के दोहन को सिरे से नकार दिया गया है। क्योकि वैदिक परम्परा कर्म पर आधारित है न कि भोग पर । इस प्रकार वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ नामक इस इकाई को विस्तार से जानने के लिये मानक ग्रन्थों का प्रारम्भ वेदों से ही माना जायेगा ।

3.2 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ (भाग-1)

वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ निम्नलिखित हैं –

1. ऋग्वेद
2. स्थापत्य वेद
3. विभिन्न आगम ग्रन्थ
4. अग्निपुराण
5. मत्स्य पुराण

6. स्कन्द पुराण
7. गरुण पुराण
8. विष्णुधर्मोत्तर पुराण
9. मयमतम्
10. विश्वकर्मा प्रकाश

3.3 वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थों का परिचय

ऋग्वेद

ऋग्वेद इस संसार की सबसे प्राचीन रचना है। ऋक अर्थात् स्थिति और ज्ञान ऋग्वेद सबसे पहला वेद है जो पद्यात्मक है। इसमें सबकुछ है। यह अपने आप में एक सम्पूर्ण वेद है। ऋग्वेद अर्थात् ऐसा ज्ञान, जो ऋचाओं में बद्ध हो। प्राचीनतम मनुष्य के मस्तिष्क तथा धार्मिक और दार्शनिक विषयों का मानव भाषा में सबसे पहला वर्णन ऋग्वेद में मिलता है। चारों वेदों में ऋग्वेद का स्थान मुख्य है ऋग्वेद अन्य वेदों की अपेक्षा अधिक प्राचीन है, तथा इसमें अन्य वेदों की अपेक्षा अधिक विषयों का सन्निवेश है। यजुर्वेद और सामवेद में याज्ञिक मन्त्रों की प्रधानता है। ऋग्वेद में वैदिक काल की सारी विशेषताओं के पूर्ण वर्णन मिलते है। ऋग्वेद के मन्त्रों में सुन्दर काव्य परंपरा पायी जाती है। वह काव्य जो हिमालय से निकलने वाली गंगा नदी के समान ही पवित्र और नैसर्गिक है। जिसमे कृत्रिमता नही है। तर्क शास्त्र से सुरक्षित तेजस्वी षड्दर्शनों एवं दार्शनिक सिद्धान्तों को प्राप्त करने के लिये ऋग्वेद की तेजस्वी वाणी अत्यन्त सहायक सिद्ध होती है। वेद ईश्वर की वाणी और ज्ञान के अक्षत भंडार है। वेद मन्त्रों का संकलन बडे सुन्दर और वेज्ञानिक ढंग से किया गया है। एक विषय के कुछ मन्त्रों के समूह को सूक्त कहते है। ऋग्वेद इसी प्रकार के सूक्तों का संग्रह है, ऋग्वेद के अधिकांश सूक्त देवताओं की स्तुति में लिखे गये है। इसी वेद के सप्तम मंडल के 54 वे सूक्त से वास्तुशास्त्र की उत्पत्ति है इस हेतु से वास्तुशास्त्र का प्रथम मनका ग्रन्थ ऋग्वेद को माना जा सकता है -

> वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्स्वावेशो अनमीवो भवा नः।
> यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥
>
> वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो।
> अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान्प्रति नो जुषस्व ॥
>
> वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या।
> पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

इस प्रकार वास्तुशास्त्र की आधारशिला ऋग्वेद में ही दिखायी देती है।

स्थापत्य वेद

स्थापत्य वेद को वास्तुशास्त्र उपनिषद् भी कहा जता है यहाँ सूत्र रूप में वास्तुशास्त्र को कहा गया है छः प्रपाठको के माध्यम से वास्तुशास्त्र को निर्दिष्ट किया गया है –

1. प्रथम प्रपाठक में वास्तोष्पति के विषय में बताते हुए आचार्य ने शिल्पो के छह अंग का

विस्तार, रूप, वृत्त, रेखा, स्थापक, शिल्प, प्रतिमा एवं स्थापक विद्या की बातें हैं। शरीर मूर्ति का विशेषण वास्तु के छह अंग एवं छह प्रकार के शरीर का वर्णन है।

2. प्रतिमा के विषय में द्वितीय प्रपाठक क्रिया मर्म, कर्तव्य, संयोग एवं नाभि रूपक कर्म करणध्वज, षटकोण, भूमि खनन प्रकार, उचित रेखा, अग्नि, रूप एवं रेखा ज्ञान का विस्तृत विचार इस प्रपाठक में किया गया है

3. तृतीय प्रपाठक में रुप का मुख्य भाव, न्यासार्थ कालबोध, खनित्र के पंचकर्म, शिल्पकार वरुण मणि रेखा, अनुपात, हर्स अवधि रक्षा विधान की विस्तृत चर्चा की गई है।

4. चतुर्थ प्रपाठक में रूपादि के अंग की बातें की गई हैं दो प्रकार के धातु की बात है, तत्व ज्ञान में कोष्ठक वर्गीकरण की महता, शुल्ब यज्ञ साधन, यूप का मान, षड भाग का प्रयोग, पलाश दंड एवं रज्जू संयोग से रेखा करण, स्थापक आचार्य स्तंभ एवं दशांग यूप की बात की गई है।

5. पंचम प्रपाठक में भाव का रोपण, भाव का आधार, रस, प्रथम रस श्रृंगार मुख्य लक्षण रूद्र आदि पर्यंत भुवन कोष एवं दिशा पाल दिगपाल, दैव भेद मार्ग भेद कहे गए हैं।

6. छठे प्रपाठक में न्यासधारण वृत्तिन्यास अलंकार मुद्रा रूप क्षेत्र षोडश कोष्ठक प्रमाण एवं उनके विभाग अलंकरण कर मुद्रा आसन शुद्धि छह प्रकार के आसन वाहन प्रतिरूप उपदेवता अरिसनधा, रूपधारा स्तोत्र प्रज्ञ की बात की गई है।

कश्यप शिल्पशास्त्र

विभिन्न पृष्ठभूमि पे अलग अलग कालखंड में लिखे गए वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक काल तक के अनेकानेक वास्तुशास्त्र के ग्रन्थ इस जनोपयोगी सिद्धान्तों पर प्रकाश डालते रहे हैं। इनमें प्राचीनता एवं प्रामाणिकता की दृष्टि से महर्षि कश्यप विरचित कश्यप शिल्पशास्त्र सर्वोपरि है। दो भागों में इस ग्रन्थ रत्न को विभक्त किया गया है। भागों के अन्दर पटल हैं। भूमि परिक्षा, दिक्परिक्षेद, प्रासाद वास्तु लक्षण, वास्तु होम विधि प्रत्मेश्त्क विधान, उपपीठ विधान, अधिष्ठान लक्षण विधि नाल प्रतिष्ठा विधि, पदवर्ग, बोधिका लक्षण फलिका लक्षण, विस्कम्भ लक्षण, वेदिका लक्षण जालक लक्षण तोरण लक्षण इस प्रकार पूर्व भाग में कुल 45अध्याय हैं एवं उत्तर भाग में परिवर्विधि अग्निदेव्लक्षण विनायक लक्षण आदि विषयो का विस्तृत समावेश करते हुए आचार्य कश्यप ने चन्डिकेश लक्षण पर्यंत 92अध्यायों को विस्तृत रूप दिया है।

किरणागम

आगमों के स्थापना से ही स्थापत्य की विभिन्न शैलियों के विकास के साथ-साथ वास्तु विद्या एक स्वतन्त्र शास्त्र के रुप में अस्तित्व में आई और वास्तु ग्रंथों की एक समृद्व परंपरा बनी। वास्तुशास्त्र का वर्णन हमारे वेदो में भी मिलता है। अथर्ववेदः के उपवेद स्थापत्य वेद को प्राचीनतम वास्तु-शास्त्र में गणना की जाती है। वेदों को सरल भाषा में समझने के लिए वेद से उपवेद की रचना की गई ,वहीं से अथर्ववेद से हमें स्थापत्य के निर्माण का ज्ञान प्राप्त हुआ। आगमों में किरणागम अत्यन्त प्रामाणिक एवं वास्तु नगद्या का प्रतिनिधित्व करने वाला यह आगम है। इसमें कुल 12 पटलों के माध्यम से वास्तुशास्त्र के विभिन्न विषयों पर मन्थन किया गया है –

1. पशुपटल
2. मायापटल
3. कर्मपटल
4. पतिपटल
5. शक्तिपातपटल
6. दीक्षाकर्म पटल
7. मन्त्र पटल
8. भुवल पटल
9. शिवतत्व पटल
10. तन्त्रावतार पटल
11. मातृकोत्पत्ति पटल
12. यन्त्रावतार पटल

कामिकागम

कामिकागम को तो वास्तु विद्या का प्रतिनिधि ग्रन्थ ही माना जाता है। इसके पचहत्तर अध्यायों में बासठ अध्याय सीधे वास्तु विषयक ही हैं। भूमि- परीक्षण से लेकर गृहप्रवेश तक की विस्तृत चर्चा है इन अध्यायों में है। कामिका आगम कुल पचहत्तर में से साठ अध्याय वास्तुकला और मूर्तिकला के लिए समर्पित करता है, और विषयों के इसके उपचार को शायद ही किसी वास्तुशिल्प ग्रन्थ से आगे बढ़ाया जा सकता है। शिल्पा शास्त्र की तरह, यह प्रारंभिक मामलों के साथ व्यवस्थित रूप से शुरू होता है, जैसे परीक्षण और मिट्टी की तैयारी, साइटों का चयन, माप की योजना और इमारतों के उन्मुखीकरण के लिये उचित भवनों का वर्णन बीस प्रकारों के अन्तर्गत किया गया है।

जिस प्रकार मत्स्य और भविष्य पुराणों के साथ-साथ बृहत संहिता में भी। लेकिन पुराणों के विपरीत, कामिका आगम में, कुछ बहुत ही तकनीकी वर्गीकरणों के तहत स्थापत्य मामलों पर चर्चा होती है, जैसे नागर, द्रविड़ और वेसर शैली, पुल्लिंग, स्त्री और नपुंसक प्रकार, शुद्ध, मिश्रित और परस्पर, क्रमशः एक पर निर्भर करते हुए सामग्री, दो सामग्रियों का मिश्रण, और कई सामग्रियों का समामेलन, संचिता, आसनचिता, और अपसंचित, जिसे अन्यथा स्थानक, आसन और सायना के रूप में जाना जाता है, जो मंदिरों के मामले में, विग्रह या मूर्तियों के खड़े होने, बैठने और बैठने की मुद्राओं पर निर्भर करते हैं। अयादी सूत्र संदर्भित अन्य बहुत ही तकनीकी मामले हैं, इसलिए सही अनुपात का चयन करने में बहुत महत्वपूर्ण है।

कारणागम

कारणागम के छः अध्यायों में वास्तु प्रकरण की चर्चा है, इस प्रकार हम कह सकते हैं कि कारणागम भी 'वास्तु' शीर्षक के तहत वास्तुकला और मूर्तिकला के लिए बहुत अधिक स्थान देता है। इस आगम में 37 अध्याय हैं, जिनमें इन विषयों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इन वास्तुशास्त्रीय विषयों का वर्णन मिलता है –

1. वास्तुविन्यास विधि

2. आद्यकाविधि
3. अधिष्ठान विधि
4. गर्भन्यास विधि
5. प्रासादलक्षण विधि
6. प्राकारलक्षण विधि इत्यादि।

इसके बाद छठे अध्याय में लिंगलक्षण विधि और प्रतिमालक्षण विधि आदिमूर्ति रचना सम्बन्धी विषयों का उल्लेख हुआ है। इसमें नृत्त मूर्ति, दक्षिणामूर्ति, चंद्रशेखर, अर्धनारी, कालनिग्रह, पुरारी, चंडेश, गौरी, दुर्गा, लक्ष्मी तथा मोहिनी आदि का भी उल्लेख हुआ है। इसके अतिरिक्त यह शिल्पा शास्त्रों में आगम के योगदान के लिए एक विशिष्ट अतिरिक्त है। यह नौ और दस ताल उपायों के विवरण से समाधान वाले दो मूल्यवान अध्यायों का योगदान देता है। यह भी मूर्तिकला से सम्बन्धित एक तकनीकी ग्रन्थ है। अगमों में मानसार के साथ घनिष्ठ समानता विषय वस्तु की दृष्टि से दिखता है।

सुप्रभेदागम

सुप्रभादगमा ने वास्तुकला और मूर्तिकला के लिए 15 से अधिक अध्याय समर्पित किए हैं। इसकी अनूठी प्रकृति इस तथ्य में निहित है कि इसने सभी महत्वपूर्ण विषयों को तुलनात्मक रूप से सूत्र एवं संकेत रूप में कम स्थान में सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है। और सभी विषयों को स्पष्ट और सटीक रूप से समझाया है। इस प्रकार वास्तु विद्या के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ इसको माना जा सकता है। इसमें पन्द्रह अध्याय वास्तु विषयक हैं।

वैखानस आगम

वैखानस आगम में मूर्तिकला पर दो अध्याय हैं, जिनमें से एक छवियों के सामान्य विवरण से सम्बन्धित है और दूसरा दास (दस) ताल उपायों से सम्बन्धित है। दस ताल उपायों पर अम्सुमदभेदागम में एक ही अध्याय है। मुख्य रुप से वास्तु विषय पर ही आधारित है। यानी वास्तुशास्त्रीय निर्माण का ज्ञान यही से प्राप्त हुआ। शेष विषय अन्य आगमों से भी प्राप्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार वास्तुशास्त्र के मानक ग्रन्थ के रूप में वैखानस आगम की भी महत्ता सिद्ध होती है।

इस प्रकार विभिन्न आगमों को पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि आगम के ऋषियों के समय उनके लिए वास्तुशास्त्र का सर्वांगीण विकास हो चुका था। 6 वीं और 12 वीं शताब्दी ईस्वी के बीच, विग्रह या मूर्ति आराधना (मंदिरों में छवियों की पूजा) के हिस्से के रूप में कई आगम ग्रंथों को संकलित किया गया था। ये सभी मंदिरों और सहायक संरचनाओं के निर्माण का विवरण देते हैं।

अग्निपुराण

इस महापुराण को ज्ञान का विश्वकोश कहा जा सकता है। अग्नि पुराण वास्तुविद्या का ऐसा मानक ग्रन्थ है, जिसे ज्ञान का भण्डार कहा जाता है। इसे स्वयं अग्नि देवता ने महर्षि वसिष्ठ को सुनाया है। इसमें सभी विद्याओं का वर्णन है। आकार में छोटा होने पर भी इसमें 383 अध्याय हैं। इस पुराण में 'गीता', 'रामायण', महाभारत' और 'हरिवंश पुराण' का विशेष रूप से

परिचय है। इसमें परा-अपरा विद्याओं का वर्णन है। मत्स्य, कूर्म आदि अवतारों की कथाएं भी हैं। इसमें श्रृष्टि वर्णन, संध्या, स्नान, पूजा विधि, होम विधि, मुद्राओं के लक्षण, दीक्षा और अभिषेक, देवालय निर्माण कला, शिलान्यास विधि, देव प्रतिमाओं के लक्षण, विग्रह की प्राण-प्रतिष्ठा, वास्तु पूजा, खगोल शास्त्र, ज्योतिष आदि अनेक विद्याओं का वर्णन है। वास्तु के विभिन्न विषयों जैसे ज्योतिष ,वास्तु, तंत्र व्याकरण को समाविष्ट किए हुए अग्नि पुराण अपने आप में वास्तुशास्त्र के प्रमुख ग्रन्थ में मान्यता प्राप्त है। भूमि चयन ,भूमि परीक्षण ,प्रतिमा निर्माण,अभिषेक-विधि से लेकर द्वार-स्थापन, नगर-वास्तु है, तथा वास्तु मण्डल चक्र की चर्चा आदि विषयों को इसमें समाविष्ट किया गया है।

इस पुराण में वास्तु विद्या का बड़ा ही विस्तृत विवेचन है जैसा कि अन्य पुराणों में अप्राप्य है। इस पुराण में वास्तुशास्त्र पर सोलह (42, 43, 44, 45, 46, 50, 51, 52, 53, 54, 55, 60, 62, 104 तथा 106) अध्यायों में वास्तु विद्या के प्रायः सभी विषयों पर प्रकाश डाला गया है। इस पुराण में प्रधानता पाषाणकला (मूर्ति निर्माण) की है, वास्तु कला पर केवल तीन अध्याय तथा मूर्ति निर्माण कला पर तेरह है। अग्निपुराण का पुर निवेश (अध्याय 106) वास्तु शास्त्रीय एक विशिष्ट देन है। इसी प्रकार से अन्य पुराणों में भी वा० वि० की प्रचुर सामग्री मरी है, जिसका स्थानाभाव से विशेष विवरण नहीं दिया जा सकता है। संक्षेपत पुराणों की वास्तु विद्या की निम्न रूपरेखा अलित की जा सकती है जो पूर्ण विकसित कही जा सकती है। इस पुराण को भारतीय जीवन का विश्वकोश कहा जा सकता है। इसमें शरीर और आत्मा के स्वरूप को अलग-अलग समझाया गया है।

अग्नि पुराण में भूगोल सम्बन्धी ज्ञान, व्रत-उपवास, तीर्थों का ज्ञान, दान-दक्षिणा आदि का महत्त्व बताते हुए वास्तुशास्त्र और ज्योतिष आदि का भी वर्णन किया गया है। अग्नि पुराण में स्वप्न विचार और शकुन-अपशकुन पर भी विचार किया गया है। पुरुष और स्त्री के लक्षणों की चर्चा भी इस पुराण का बहुत महत्वपूर्ण अंग है।

मत्स्य पुराण

इस पुराण में वास्तुविद्या पर लगभग आठ अध्याय हैं। 252 वें अध्याय में वास्तु-विद्या के प्रसिद्ध प्राचीन अठारह वाचार्यों पर प्रकाश डाला गया है। पुराणों में विशेषकर जिन-जिन महापुराणों मे वास्तुशास्त्र के विवरण मिलते है उनमें यह पुराण प्रमुख है। मत्स्य के अनुसार भवन निर्माण का प्रारंभ स्तंभ रचना से प्रारंभ होना चाहिये। स्तभ सम्पूर्ण भवन की योजना एवं रचना का आधार है। स्तंभो को पांच प्रकार के वर्गो में वर्गीकृत किया गया है –

1. रूचक
2. वज्र
3. द्विवज्र
4. प्रलीनक
5. वृत्त।

इस वर्गीकरण का आधार वास्तु सौंदर्य एवं उपयोगिता है। मत्स्यपुराण में अनेक विषयों का समावेश है। करीब आठ अध्याय विशेष कर वास्तु विषयक ही हैं। मत्स्य पुराण में स्तम्भ निर्माण के बारे में वर्णन है,जो कि किसी भी भवन का मूलाधार होता है। इस ग्रन्थ में अनेक

प्रकार के स्तम्भ निर्माण की कला बतलायी गयी है। पीठिका लक्षण, लिंग मान लक्षण मूर्ति-निर्माण का विशद वर्णन भूमि का चयन और परीक्षण,तथा भवन के विभिन्न शालभेदों-जैसे की एकशाल, चत्तुश्शाल का भी वर्णॅन है।नवताल-लक्षण 258 वें, पीठिका लक्षण 262 वें, लिङ्ग-लक्षण 263वें इन तीनों अध्यायों में प्रस्तर - कला तथा मूर्ति निर्माण परक विवेचन है। प्रासाद वर्णन 266, मण्डप लक्षण 270 इन दो अध्यायों में प्रासाद- वास्तु के विवरण मिलते हैं जो आगे 'प्रासाद' पटल में द्रष्टव्य होते हैं।

मत्स्य पुराण में भगवान श्रीहरि के मत्स्य अवतार की मुख्य कथा के साथ अनेक तीर्थ, व्रत, यज्ञ, दान आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। इसमें वास्तुशास्त्र के मुख्य विषय के सहित जल प्रलय, मत्स्य व मनु के संवाद, राजधर्म, तीर्थयात्रा, दान महात्म्य, प्रयाग महात्म्य, काशी महात्म्य, नर्मदा महात्म्य, मूर्ति निर्माण माहात्म्य एवं त्रिदेवों की महिमा आदि पर भी विशेष प्रकाश डाला गया है। यह पुराण चौदह हजार श्लोकों से युत है।

इस पुराण में सात कल्पों का कथन है, नृसिंह वर्णन से शुरु होकर यह चौदह हजार श्लोकों का पुराण है। मनु और मत्स्य के संवाद से शुरु होकर ब्रह्माण्ड का वर्णन ब्रह्मा देवता और असुरों का जन्म होना, मरुद्गणों का प्रादुर्भाव इसके बाद राजा पृथु के राज्य का वर्णन वैवस्त मनु की उत्पत्ति व्रत और उपवासों के साथ मार्तण्डशयन व्रत द्वीप और लोकों का वर्णन देव मन्दिर निर्माण प्रासाद निर्माण आदि का वर्णन है। इसके अतिरिक्त कृष्णाष्टमी, गौरितृतीया, अक्षयतृतीया,सरस्वती, भीमद्वादशी आदि व्रत, प्रयाग, नर्मदा, कैलास वर्णन, राजधर्म, शकुनशास्त्र, शिल्पशास्त्र, प्रतिमानिर्माण, प्रतिष्ठापन विधि, पुरुषार्थ, गृहनिर्माण, प्रकृति वर्णन, ययाति चरित्र, देवयानी कथानक, सावित्री-उपाख्यान, नरसिंहावतार, चन्द्रवंश, सूर्यवंश, यदुवंश, कुरुवंश,आंध्रप्रदेश के राजाओं का विवरण युग, कल्प आदि का विवरण विस्तार से मिलता है।

गरुड़ पुराण

इस पुराण की वास्तु-विद्या के चार अध्यायों में से दो अध्यायों मे (46-47), सभी प्रकार के भवनों (मानव एवं दैव) तथा दुर्ग-निवेश एवं पुर निवेश पर बड़ा ही सुन्दर विवेचन मिलता है। गरुड़पुराण की अपनी विशेषता है - पुर निवेश तथा उद्यान भवन (गार्डेन सिटीज)। साथ ही परम्परा के अनुरूप प्रासाद एवं प्रतिमा (45 तथा 48) पर भी सुन्दर विवेचन है। इस पुराण को 'मुख्य गारुड़ी विद्या' भी कहा गया है। इस पुराण का ज्ञान सर्वप्रथम ब्रह्माजी ने महर्षि वेद व्यास को प्रदान किया था। तत्पश्चात् व्यासजी ने अपने शिष्य सूतजी को तथा सूतजी ने नैमिषारण्य में शौनकादि ऋषि-मुनियों को प्रदान किया था। गरुड़ पुराण अग्नि पुराण के समान ही गरुड़ पुराण में अनेक विषयों का समावेश है।इसमें सभी प्रकार के न्यास पर प्रकाश डाला गया है। इस पुराण की विशेषता यह भी है कि पुरनिवेश के साथ ही उद्यान-निवेश की भी चर्चा इस ग्रन्थ में है। एकाशीति पद,तथा चतुषष्टि-पद वास्तु-चक्र और उनके देवता का स्थापन के साथ-साथ प्रतिमा-निर्माण पर भी प्रकाश डाला गया है।

इसमें 18 अध्याय हैं एवं उन्नीस हजार श्लोक हैं परन्तु वर्त्तमान में सात हजार श्लोक ही उपलब्ध हैं। इस पुराण में सबसे पहले सृष्टि का वर्णन है। इसके बाद सूर्य आदि की पूजा, पूजा की विधि, दीक्षा विधि, श्राद्ध पूजा नवव्यूह की पूजा विधि, वैष्णव-पंजर, योगाध्याय, विष्णुसहस्रनाम कीर्तन, विष्णु ध्यान, सूर्य पूजा, मृत्युंजय पूजा, माला मन्त्र, शिवार्चा गोपालपूजा, त्रैलोक्यमोहन, श्रीधर पूजा, विष्णु-अर्चा पंचतत्व-अर्चा, चक्रार्चा, देवपूजा, न्यास आदि संध्या उपासना

दुर्गार्चन, सुरार्चन, महेश्वर पूजा, पवित्रोपण पूजन, मूर्ति-ध्यान, वास्तुमान प्रासाद लक्षण, सर्वदेव-प्रतिष्ठा पृथक-पूजा-विधि, अष्टांगयोग, दानधर्म, प्रायश्चित-विधि, द्वीपेश्वरों और नरकों का वर्णन, सूर्यव्यूह, ज्योतिष, सामुद्रिकशास्त्र, स्वरज्ञान, नूतन-रत्न-परीक्षा, तीर्थ-महात्म्य, गयाधाम का महात्म्य, मन्वन्तर वर्णन, पितरों का उपाख्यान, वर्णधर्म, द्रव्यशुद्धि समर्पण, श्राद्धकर्म, विनायकपूजा, ग्रहयज्ञ आश्रम, जननाशौच, प्रेतशुद्धि, नीतिशास्त्र, व्रतकथायें, सूर्यवंश, सोमवंश, श्रीहरि-अवतार-कथा, रामायण, हरिवंश, भारताख्यान, आयुर्वेदनिदान चिकित्सा द्रव्यगुण निरूपण, रोगनाशाक विष्णुकवच, गरुणकवच, त्रैपुर-मंत्र, प्रश्नचूणामणि, अश्वायुर्वेदकीर्तन, औषधियों के नाम का कीर्तन, व्याकरण का ऊहापोह, छन्दशास्त्र, सदाचार, स्नानविधि, तर्पण, बलिवैश्वदेव, संध्या, पार्णवकर्म, नित्यश्राद्ध, सपिण्डन, धर्मसार, पापों का प्रायश्चित, प्रतिसंक्रम, युगधर्म, कर्मफ़ल योगशास्त्र विष्णुभक्ति श्रीहरि को नमस्कार करने का फ़ल, विष्णुमहिमा, नृसिंहस्तोत्र, विष्णवर्चनस्तोत्र, वेदान्त और सांख्य का सिद्धान्त, ब्रह्मज्ञान, आत्मानन्द, गीतासार आदि का वर्णन है।

स्कन्दपुराण

इस पुराण के माहेश्वर-खण्ड (द्वितीय भाग) तथा वैष्णवखण्ड (द्वितीय भाग) में वास्तु - विद्या के वर्णन प्राप्त होते है। मत्स्य पुराण के बाद स्कन्द पुराण ही सर्वाधिक प्राचीन है। इस महापुराण में महानगर-स्थापन, स्वर्णशाला, रधनिर्माण, स्थपति निर्देश, विवाह मण्डप, चित्र-कर्म आदि ये जो विवरण मिलते हैं, उनमें वास्तु - विद्या के व्यापक विस्तार पर प्रकाश पड़ता है। वास्तु-कर्म, शिल्प-कर्म का पर्याय होगया है अन्यथा रथ-निर्माण आदि तक कला से सम्बन्धित कर्म, वास्तुकला (भवन निर्माण कृता) में कैसे संचालित होते। प्राचीन परम्परा में वास्तु कला एवं पापाण- कला (मूर्ति निर्माण कला का) घनिष्ठ सम्बन्ध है, परन्तु चित्रकला के साथ सम्बन्ध यहीं पर सर्वप्रथम देखने को मिला। इस प्रकार विभिन्न विषयों के विस्तृत विवेचन की दृष्टि से स्कन्दपुराण सबसे बड़ा पुराण है। इसमें श्लोकों की संख्या 81000 है। भगवान स्कन्द (कार्तिकेय) के द्वारा कथित होने के कारण इसका नाम 'स्कन्दपुराण' है। इसमें बद्रिकाश्रम, अयोध्या, जगन्नाथपुरी, रामेश्वर, कन्याकुमारी, प्रभास, द्वारका, काशी, शाकम्भरी, कांची आदि तीर्थों की महिमा; गंगा, नर्मदा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों के उद्गम की मनोरथ कथाएँ; रामायण, भागवतादि ग्रन्थों का माहात्म्य, विभिन्न महीनों के व्रत-पर्व का माहात्म्य तथा शिवरात्रि, सत्यनारायण आदि व्रत-कथाएँ अत्यन्त रोचक शैली में प्रस्तुत की गयी हैं। विचित्र कथाओं के माध्यम से भौगोलिक ज्ञान तथा प्राचीन इतिहास की ललित प्रस्तुति इस पुराण की अपनी विशेषता है।

इसमें लौकिक और पारलौकिक ज्ञान के अनन्त उपदेश भरे हैं। इसमें धर्म, सदाचार, योग, ज्ञान तथा भक्ति के सुन्दर विवेचन के साथ अनेकों साधु-महात्माओं के सुन्दर चरित्र पिरोये गये हैं। यह खण्डात्मक और संहितात्मक दो स्वरूपों में उपलब्ध है। दोनों स्वरूपों में 81-82 हजार श्लोक परम्परागत रूप से माने गये हैं। खण्डात्मक स्कन्द पुराण में क्रमशः –

1. माहेश्वर
2. वैष्णव
3. ब्राह्म
4. काशी

5. अवन्ती (ताप्ती और रेवाखण्ड)
6. नागर खण्ड
7. प्रभास खण्ड ये सात खण्ड हैं।

संहितात्मक स्कन्दपुराण में –

1. सनत्कुमारसंहिता
2. शंकरसंहिता
3. ब्राह्मसंहिता
4. सौरसंहिता
5. वैष्णवसंहिता
6. सूतसंहिता

ये छः संहिताएँ हैं।

भविष्य पुराण

भविष्य पुराण में कुल एक सौ उनतीस अध्याय तथा अट्ठाईस हजार श्लोक हैं जिनमें तीन अध्यायों में वास्तुशास्त्रीय विषयों का विशद वर्णन है। शेष अध्यायों में भी वर्णन है, परन्तु तीन अध्याय वास्तुशास्त्र को समर्पित हैं। इस पुराण में सूर्या देव का महत्त्व बारह महीनो का निर्माण एवं शिल्प मूर्ती चित्र आदि कला के वास्तुशास्त्रीय विषयो का समावेश किया गया है।

विष्णुधर्मोत्तरपुराण

विष्णुधर्मोत्तर पुराण एक उपपुराण है। यह विष्णुपुराण का परिशिष्ट माना जाता है। इस पुराण में कथाओं के अतिरिक्त ब्रह्माण्ड के रहस्य, भूगोल, खगोलशास्त्र, ज्योतिष, वास्तुशास्त्र, काल-विभाजन, कुपित ग्रहों एवं नक्षत्रों का शान्ति विधान, तपस्या, वैष्णवों के कर्तव्य, कानून एवं राजनीति, युद्धनीति, मानव एवं पशुओं के रोगों की चिकित्सा, खानपान, व्याकरण, छन्द, शब्दकोश, भाषणकला, नाटक, नृत्य, संगीत और अनेकानेक कलाओं की चर्चा की गयी है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के 'चित्रसूत्र' नामक अध्याय में वास्तुशास्त्र के कलाओ में मूर्तिकला एवं चित्रकला का महत्त्व इन शब्दों में बताया गया है -

> कलानां प्रवरं चित्रम् धर्मार्थ काम मोक्षादम्।
> मांगल्य प्रथमं दोतद् गृहे यत्र प्रतिष्ठितम्॥

अर्थात् कलाओं में चित्रकला सबसे ऊँची है जिसमें धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। अतः जिस घर में चित्रों की प्रतिष्ठा अधिक रहती है, वहाँ सदा मंगल की उपस्थिति मानी गई है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण को स्थापत्यकला, मूर्तिकला और चित्रकला का कोष ग्रन्थ कहा जा सकता है। इस पुराण के 43 अध्यायों में वास्तु कला, मूर्ति कला और चित्र कला का वर्णन हुआ है। इस पुराण में मानव गृहों एवं देव गृहों की रचना का निरुपण पृथक्-पृथक् है। इसमें छ: प्रकार के दुर्गो, उनके चारों ओर बनायी जाने वाली परिखा, देवालय, राज प्रसाद, राज मार्ग, विभिन्न वणिकों और व्यवसाय जीवियों के बाजार तथा भवनों का वर्णन किया गया हैं। विष्णुधर्मोत्तरपुराण के 29 वें अध्याय में गृह निर्माण हेतु उपयुक्त भूमि का चयन, पुष्प, दीपक और जल के द्वारा उसकी परीक्षा, पुरभूमि का चतुष्षष्ठि (चौसठ) भागों में विभाजन उसके

विभिन्न भागों को विभिन्न देवों को समर्पित करना, गृह भूमि का विभाजन और भवनों के विभिन्न भागों का विभाजन इत्यादि वास्तु कला विषयक तथ्यों का वर्णन है । विष्णुधर्मोत्तरपुराण के 30 वें अध्याय में वृक्षो के रोपण सम्बन्धी नियमों का उल्लेख है, जिसमें गृह पति को गृह के वाम भाग में उद्यान रचना करने का निर्देश दिया गया है। इससे स्पष्ट दिखता है कि वास्तुशास्त्र पर्यावरण का भी प्राचीन काल से ही हितैषी है।

विश्वकर्माप्रकाश

वास्तुशास्त्र का प्रथम स्वतन्त्र ग्रन्थ की उपाधि विश्वकर्मा प्रकाश को प्राप्त है । देवशिल्पी विश्वकर्मा कृत विश्वकर्माप्रकाश वास्तुशास्त्र का अप्रतिम एवं प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं । जिसमें 14 अध्यायों में सम्पूर्ण वास्तुशास्त्र का उत्तम वर्णन किया गया हैं। अध्यायों के वर्ण्य विषय संक्षेप में इस प्रकार हैं –

1. भूम्यादिलक्षणाध्याय – इस अध्याय में वास्तुशास्त्र की उत्पत्ति वास्तुपुरुष का वर्णन परम्परा,भूमि परीक्षण के विविध प्रकार की विधियाँ, वास्तु के लिए विभिन्न प्रकार के भूमि आदि का विस्तार से वर्णन है।

2. सामगृहादि निर्माण अध्याय - इस अध्याय में स्वपन विधि, स्वप्न के पूर्व प्रकार, भूमि के विभिन्न ढलान का विचार, चंद्रमा की अनुकूलता, गोचर में ग्रहों का विचार, गृह एवं गृह स्वामी के मेलापक की विधियां, आयादि विचार, 16 प्रकार के गृह निर्माण की दिशा, गृह में आलिंद का स्थान, गृह की लंबाई तथा ऊंचाई इत्यादि का वर्णन एवं वीथिका इत्यादि सेनापति, मंत्री, सचिव के गृहों का प्रमाण, रानियां, युवराज के गृहों का प्रमाण सामंत अधिकारी आदि के विषय में सर्वतोभद्र वास्तु के लक्षण इत्यादि बतलाए गए हैं।

3. गृहवास्तु कालनिर्णय अध्याय - इस अध्याय में गृहारंभ मुहूर्त के कथन से लेकर गृह आरंभ में वृष वास्तु चक्र, जलाशय आदि विचार, लक्ष्मी विनाशक योग एवं अग्निदाह योग एवं पुत्रदाह योग गृहारंभ कुंडली के लग्न से लेकर 12 भाव तक के स्थित ग्रहों के संक्षिप्त फल का विवेचन किया गया है।

4. गृहादि निर्माण अध्याय - गृह के उत्तम आदि भेद कथन, राजा, सेनापति पुरोहित एवं युवराज के शैया का मान, 14 प्रकार के गृह, में काल शुद्धि की अपेक्षा, गृह प्रवेश का संक्षिप्त परिचय, अंगुल प्रमाण का स्पष्टीकरण, हस्तादि माप, हाथ से मापने योग्य वस्तुएं, हस्तादि अंगुल प्रमाण, चारों वर्णों के लिए शिला का वर्णन, आधारशिला के विशेष लक्षण का कथन, द्वारपाल आदि की पूजा का विधान है।

5. शिलान्यास अध्याय – इस अध्याय में 64 पद के वास्तु में देवताओं की स्थिति, गृह वास्तु चक्र शंकु रोपण, 81 पद वास्तु के निर्माण की विधि शल्य ज्ञान का प्रकार, शल्य ज्ञान की विधियां, कलश स्थापन एवं पूजन विधि, नवग्रह का निर्देश, 45 देव का पूजन, बलिदान विधि, भूतादि बली, ब्रह्म स्थली का पूजन, पंचदेव तथा पंच तत्वों का आवाहन, स्थपति तथा अन्य आचार्य ब्राह्मण को दान की विधि आदि वर्णित हैं।

6. प्रसाद निर्माण अध्याय - देवालय निर्माण योग्य भूमि, वास्तु बली तथा प्रसाद के विभिन्न विषयों की गणना, शिलान्यास विधि प्रसाद के अवयवों का माप आदि का वर्णन है।

7. द्वारनिर्माण अध्याय – इस अध्याय में द्वार विन्यास के पंचदश पक्ष, सूर्य नक्षत्र - चंद्र नक्षत्र से द्वार चक्र की स्थिति, द्वार निर्माण में मुहूर्त, द्वार शाखा में तिथि आदि का विचार, गृह के

मध्य में द्वार का निषेध, द्वार वेध के अपवाद द्वार निर्माण में 64 पदों के विचार का निर्देश द्वार के विभिन्न दोष ब्रह्म स्थान की रक्षा, द्वार के विभिन्न देशों का निराकरण द्वार अर्चन की विधि का फल इत्यादि का वर्णन है।

8. जलाशय करणम् – इस अध्याय में विचारणीय विषय आकार जलाशय के आरंभ का मुहूर्त, जलीय भूमि के विषय में विविध बातें, दिग भागों में जलाशय का फल, जलाशय निर्माण की लग्न के दोष, जलाशय प्रतिष्ठा, जलाशय प्रतिष्ठा का मुहूर्त, जलाशय प्रतिष्ठा का फल जलाशय की दिशाएं एवं उनके फल का विशद वर्णन है।

9. वृक्षछेदन अध्याय - चारों वर्णों के लिए शुभ वृक्षों का कथन, मुहूर्त विचार शिवलिंग प्रतिमा एवं इंद्र ध्वज निर्माण में त्याज्य समय, वृक्ष पूजा, विभिन्न दिशाओं में कटे हुए वृक्ष गिरने का फल, वास्तु के दोष एवं दोषों के फल का निराकरण, वास्तु की परीक्षा वास्तु द्वारा शकुन अपशकुन का ज्ञान।

10. नव गृहप्रवेश अध्याय – इस अध्याय में विस्तार से गृह प्रवेश मुहूर्त, गृह मूल में बलिदान, वृक्षों के लिए बलि, नूतन गृह प्रवेश विचार, शत्रु विनाशक योग, भार्या नाशक योग, गृह प्रवेश में वामार्क विचार, गृह प्रवेश की विभिन्न स्थितियां, शैयादि के अंगुल आदि माप का कथन, बंधु वर्गादि को भोजन तथा अंतःपुर प्रवेश की प्रक्रिया है।

11. दुर्ग निर्माण अध्याय – इस अध्याय में कोट निर्माण विद्या का मुहूर्त, महत्व, दुर्ग निर्माण हेतु उपयुक्त स्थल, 10 प्रकार के भय प्रद दुर्ग, प्रत्येक दुर्ग के भय का कथन, दुर्ग हेतु वास्तु पूजन, कोट निर्माण सम्बन्धी निर्देश, पूर्व का निर्माण उत्पाद आदि शान्ति विधि में 8 कलशों की स्थापना, शान्ति कर्मों में वास्तु पूजा,विविध शान्ति विधान, मृत्युंजय मंत्र दुष्ट नक्षत्रेश ग्रह के लिए बलिदान दुर्ग मध्य में कील रोपण आदि की चर्चा है।

12. शल्य निर्णय अध्याय - गृह आरंभ में शल्य ज्ञान का प्रयोजन, छः गुणसूत्र से भूमि का शोधन, शल्य ज्ञान की विधियां, नव कुंभ में पूजन की विधियां, नंदा-भद्रा-जया-रिक्ता-पूर्णा शिला की पूजन, ताम्र कुंभ का निषेध, पृथ्वी पूजन कर्म इस अध्याय के प्रमुख विषय हैं।

13. राजभवनवेध निर्णय अध्याय - सभी प्रकार के गृहों के अंधादि वेधों का कथन, कुट्टक तथा सुप्त के लक्षण, सोलह अधम गृहों के फल, गृह में पाषाण का फल, गृह के विस्तार आदि शुभत्व कोण वेध दृष्टि वेध के फल गृह निर्माण सम्बन्धी विशेष नियम बताये गये हैं ।

14. द्विजाति वेध अध्याय - द्विजातियों के लिए विशेष वेधों का कथन ग्राम में संकर जातियों का नगर के कोने में निवास, गृह से चारों ओर खाली भूमि छोड़ना, नगर निर्माण में वेध आदि का विचार, विषम गृह में वेध का अभाव, अस्वत्थादि गृहों के वेद वेध के परिहार वेध के फल गृह के समीप शुभ वृक्ष गृह एवं नगर के चारों ओर पताका, गांव का ध्वज दक्षिणी द्वार में स्तंभ स्थान, एवं अन्तिम में वास्तुशास्त्र की परंपरा का वर्णन प्राप्त होता है।

इस प्रकार हम देख पा रहे हैं कि विश्वकर्मा जी द्वारा रचित इस वास्तुशास्त्र में 14 अध्यायो में लगभग 1374 श्लोक हैं। इसमें भूमि लक्षण, गृह मुहूर्त, वास्तु पद विन्यास, प्रसाद विधान, द्वार विधान, द्वार निर्माण, शल्य ज्ञान, शल्य को दोष को दूर करने की विधी का वर्णन हमें मिलता है। विश्वकर्म प्रकाश के अध्ययन गृहादि विचार में हमे आयादी सूत्रों के बारे में जानकारी मिलती

है।

ग्रन्थ के अन्त में दी गयी परम्परा के अनुसार वास्तुशास्त्र का उपदेश गर्ग ने पराशर को, पराशर ने बृहद्रथ को तथा बृहद्रथ ने विश्वकर्मा को दिया था। यथा –

इति प्रोक्तं वास्तुशास्त्रं पूर्वं गर्गाय धीमते।
गर्गात्पराशरः प्राप्तः तस्मात्प्राप्तो बृहद्रथः।
बृहद्रथात् विश्वकर्मा प्राप्तवान् वास्तुशास्त्रकम्।
स विश्वकर्मा जगती हिताय कथयत् पुनः॥
वासुदेवादिषु पुनर्भूलोके भक्तितोऽब्रवीत॥

इस ग्रन्थ में भूम्यादिलक्षण, समगृहादि निर्माण, गृहवास्तुकलानिर्णय, गृहादिनिर्माणभेद, शिलान्यास पद्धति, प्रासादनिर्माण विधि, जलाशयकरणम्, वृक्षच्छेदन विधि, नवगृहप्रवेश, दुर्गनिर्माण एवं भेद, शल्य निर्णय, राजभवनवेधनिर्णय, द्विजातिवेध आदि विषयों का विस्तृत विवेचन हैं।

मयमतम्

दानवराज मयासुर द्वारा रचित 'मयमत' दक्षिण भारतीय वास्तु-परम्परा अथवा द्रविड रीति का मानक ग्रन्थ है। 'मयमत' ग्रन्थ में वास्तु के स्थान पर 'वस्तु' पद का प्रयोग किया तथा 'वास्तुशास्त्र' के स्थान पर सभी जगह 'वास्तुशास्त्र' का प्रयोग किया है। मय के अनुसार वस्तु ही मूल है तथा वस्तु से उत्पन्न पदार्थ 'वास्तु' है। इन्होंने पृथिवी को प्रथम वस्तु माना है। इसके अतिरिक्त प्रासाद, यान एवं शयन भी वास्तु की श्रेणी में परिगणित हैं। मयमतम् नामक ग्रन्थ वास्तुशास्त्र का अन्यतम ग्रन्थ है, जिसमें 36 अध्याय हैं। मानसार के सामान इसमें भूमि चयन, भूमि परीक्षण, नीव भरने की विधि, नगर ग्राम की रचना, भवन बनाने की विधि का वर्णन है। इस ग्रन्थ में वास्तु के प्रमुख विषय भूमि चयन, परीक्षण, गर्भ विन्यास, प्रतिमा लक्षण तथा जीर्णोद्धार आदि प्रमुख विषयों का वर्णन किया गया हैं। इसमें वास्तु की व्याख्या में अमर्त्य और मर्त्य के निवास स्थान को वस्तु अथवा वास्तु की संज्ञा दी गई है। मयमतम् में प्रति पादित विषयों के आधार पर इसे तीन खण्डों में विभाजित किया जा सकता है, जिसके प्रथम खण्ड (अध्याय 1 – 10) में गृह - भूमि –विषयक वर्णन तथा द्वितीय खण्ड (अध्याय 11 – 30) में भवन निर्माण से सम्बन्धित व्याख्या एवं तृतीय खण्ड (अध्याय 31 – 36) में चतुर्विध वास्तु की चर्चा के साथ- साथ प्रतिमा -विज्ञान का भी वर्णन है।

इसका प्रथम अध्याय संग्रहाध्याय, दूसरा वस्तुप्रकार, तीसरा भूपरीक्षा, चौथा भूपरिग्रह, पाचवाँ मानोपकरण, छठा दिक्परिच्छेद, सातवाँ पदविन्यास, आठवाँ बलिकर्म, नवाँ ग्रामविन्यास, दसवाँ नगरविधान, ग्यारहवाँ भूलम्बविधान, बारहवाँ गर्भविन्यास, तेरहवाँ उपपीठ-विधान, चौदहवाँ अधिष्ठानविधान, पन्द्रहवाँ पादप्रमाण-द्रव्यपरिग्रहविधान, अट्ठाहरवाँ प्रासादोर्ध्ववर्ग, उन्तीसवाँ एक भूमि विधान तथा बीसवाँ द्विभूमिविधान है। इसके पश्चात् क्रमशः त्रिभूमिविधान, चतुर्भूम्यादि बहुभूमिविधान, प्राकारपरिवार-विधान, गोपुरविधान, मण्डपसभाविधान, शालाविधान, चतुर्गृहविधान, गृहप्रवेश, राजवेश्मविधान, द्वारविधान, यानाधिकार, शयनासनाधिकार, लिङ्गलक्षण, पीठ-लक्षण, अनुकर्म विधान तथा प्रतिमा-लक्षण संज्ञक

अध्याय हैं। ग्रन्थ के अन्त में कूपारम्भ संज्ञक परिशिष्ठ प्राप्त होता है। इस प्रकार विषयवस्तु की दृष्टि से मयमत ग्रन्थ में प्रथम 'वस्तु' (अथवा वास्तु) भूमि है। तदनन्तर ग्राम-नगरादि का स्थान आता है। इसके पश्चात् देवों एवं चारों वर्णों के लिये भूमि, भवन, यान तथा श्यनासन का स्थान आता है। तीसरे एवं चौथे अध्याय में भूमि के परीक्षण का वर्णन प्राप्त होता है। तदनन्तर माप के विभिन्न प्रकारों एव ईकाइयों का निरूपण किया गया है। चार प्रकार के शिल्पी-स्थपति, सूत्रग्राही, तक्षक तथा वर्धकि निर्माण कार्य के अभिन्न अंग है – अतः इनका ग्रन्थ में विस्तार से वर्णन किया गया है। निर्माण हेतु दिशा का सटीक ज्ञान एवं कार्य के अनुसार वास्तुपदविन्यास आवश्यक होता है। अतः ग्रन्थ में इनका विवेचन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त ग्राम, नगर, भवन, नींव में गर्भविन्यास, उपपीठ, अधिष्ठान, स्तम्भ, द्रव्य-संग्रह, प्रस्तरकरण, सन्धिकर्म, कलश, छत एवं शिखर आदि का निरूपण किया गया है। देवालय, राजभवन-मर्यादा गोपुर, मण्डप, सभागृह, शालगृह, अलिन्द, आँगन आदि वास्तु के अंग है। इनका भी विवेचन ग्रन्थ में प्राप्त होता है।

अभ्यास प्रश्न – 1

निम्नलिखित में से सही विकल्प का चुनाव कीजिये

1. परमपिता परमात्मा की अनादि और दिव्य वाणी कौन सा वेद है -
   अ. ऋग्वेद
   ब. सामवेद
   स. यजुर्वेद
   द. सभी
2. वास्तुशास्त्र का उद्गम स्थल क्या है
   अ. स्थापत्य वेद
   ब. भविष्य पुराण
   स. नारद पुराण
   द. कोई नहीं
3. संसार की सबसे प्राचीन रचना कौन सी है
   अ. ऋग्वेद
   ब. सामवेद
   स. गरुड़ पुराण
   द. इनमे से कोई नहीं
4. वास्तुशास्त्र उपनिषद किसे कहते हैं -
   अ. स्थापत्य वेद
   ब. धनुर्वेद
   स. आयुर्वेद
   द. इनमे से कोई नहीं

अभ्यास प्रश्न – 2

निम्नलिखित में से सत्य असत्य का निर्धारण कीजिये

1. विश्वकर्मा प्रकाश वास्तुशास्त्र का प्रथम स्वतन्त्र ग्रन्थ है ( )
2. मयमतम ग्रन्थ में कुल 36 अध्याय हैं। ( )
3. विष्णुधर्मोत्तर पुराण में चित्रकला की बात नही की गई है ( )
4. विश्वकर्मा प्रकाश में कुल 44 अध्याय हैं ( )

अभ्यास प्रश्न – 3

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिये –

गरुड़ पुराण के किस अध्याय में वास्तु की चर्चा है 46 एवं 47

1. ....पुराण में वास्तु के 5 स्तंभों की चर्चा मिलती है।
2. स्कंद पुराण में .... खंड हैं।
3. ज्ञान का कोष या भंडार ....पुराण को कहा गया है।
4. संहितात्मक स्कंद पुराण में .... संहिताएं हैं।

3.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना कि वास्तुशास्त्र मूल या मानक ग्रन्थ कौन अकों से हैं किन किन ग्रंथो से विभिन्न कालखंडो के बाद वास्तुशास्त्र अपनी वैज्ञानिकता एवं प्रमाणिकता को धारण किया हुआ आज तक हमारे पास सुरक्षित है। इस शास्त्र की ग्रन्थ परम्परा कौन सी है? इस शास्त्र के मानक ग्रंथो का वर्णन भी आपने पढ़ा। उनका विस्तृत परिचय जानकर उनके विषय वास्तु से भी आप परिचित हुए। कुछ आचार्य वेदांग ज्योतिष के संहिता स्कन्ध से वास्तु का प्रत्यक्ष सम्बन्ध मानते है, कुछ विद्वान अष्टाङ्गवास्तु में वास्तु के आठ अङ्गों में ज्योतिष को भी एक अङ्ग मानते हैं। इस प्रकार दोनों ही स्थितियों में ज्योतिष और वास्तुशास्त्र का अङ्गांगीभाव सिद्ध होता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वास्तुशास्त्र वैदिक-पौराणिक-आगम-ब्राह्मण ग्रन्थ से लेकर अपनी स्वतन्त्रता तक की यात्रा पूरी किया है और आज भी लोकोपयोगी बना हुआ है जो सबका कल्याण करने में निहित है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप वास्तु के शास्त्रीय विषयो से भी परिचित हुए।

3.5 शब्दावली

मानक ग्रन्थ	–	मूल ग्रन्थ जहाँ से वास्तुशास्त्र की उत्पत्ति हुयी या उसका स्वतन्त्र रूप दिखाई दिया।
अष्टाङ्गवास्तु	–	वास्तुशास्त्र के आठ अंग।
महापुराण	–	18 पुराण जिनके पञ्च लक्षण हैं।
संहिता	–	ज्योतिष शास्त्र के तीन स्कन्धो में एक स्कन्ध जिसके अन्तर्गत सामूहिक फल का विचार किया जाता है।
भूपरीक्षा	–	भूमि परिक्षण।

शिलान्यास	–	भूमि पूजन के बाद 5 शिलाओं को पूजन पूर्वक स्थापित करना
द्राविड	–	स्कन्द पुराण के अनुसार विन्ध्याचल से दक्षिण दिशा का क्षेत्र या प्रदेश, वर्तमान में इसका अर्थ दक्षिण भारत से भी ग्रहण किया जाने लगा है।
गारूणी विद्या	–	गरुड़ पुराण का दूसरा नाम

3.6 अभ्यास प्रश्नों की उत्तरमाला

अभ्यास प्रश्न – 1

1. द. सभी
2. अ. स्थापत्य वेद
3. अ. ऋग्वेद
4. अ. स्थापत्य वेद

अभ्यास प्रश्न – 2

1. सत्य
2. सत्य
3. असत्य
4. असत्य

अभ्यास प्रश्न – 3

1. मत्स्य पुराण
2. सात
3. अग्नि पुराण
4. छः

3.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. विश्वकर्मा प्रकाश
2. मयमतम
3. मत्स्यपुराण
4. अग्निपुराण
5. वास्तुसार